इकाई 13

परिस्थितिकी, पर्यावरण और विकास

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 पारिस्थितिकी और स्थायी विकास

13.3 पर्यावरणीय चिंता के मुद्दे और समकालीन सामाजिक सिद्धांत

13.4 पारिस्थितिकीय और पर्यावरण पर विकास के परिणाम

13.5 पारिस्थितिकी आंदोलन और उत्तरजीविता

13.6 पारिस्थितिकीय चिंता के मुद्दों के रूप में विकास परियोजनाएँ

13.7 पर्यावरणीय चिंता के मुद्दों का अंतर्राष्ट्रीयकरण

13.8 प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन के लिए सहभागितापरक उपागम

13.9 सारांश

13.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अधिगम उद्देश्य

हमारी यह इकाई निम्नलिखित बातों पर प्रकाश डालते हुए विकास के पर्यावरणीय और पारिस्थितिकीय मुद्दों से आपको परिचित कराती है:

- पारिस्थितिकी, पर्यावरण और विकास के आपसी संबंध;
- पारिस्थितिकी और पर्यावरण पर विकास के परिणाम; और
- पारिस्थितिकीय आंदोलनों की चिंता के मुद्दे।

13.1 प्रस्तावना

हमारी यह इकाई आपको 'पारिस्थितिकी, पर्यावरण और विकास' के अंत: संबंधों से अवगत कराती है। इकाई की शुरुआत संकल्पनाओं और उनके विकास पर चर्चा की गई। इस इकाई पारिस्थितिकी और पर्यावरण पर विकास के परिणामों की चर्चा करती है। इसके अलावा पर्यावरण के निम्नीकरण, सामाजिक प्रदूषण और वनों की तबाही जैसे मुद्दों पर भी इकाई में चर्चा की गई है। पर्यावरणीय आंदोलनों के प्रमुख विचारणीय मुद्दों पर भी चर्चा की गई है। इस इकाई का अंतिम अनुभाग ऐसी कुछ विकास परियोजनाओं से संबंधित है जिन्होंने विश्व भर के पर्यावरणविद्‌ों को एक चेतावनी दे दी है।

13.2 पारिस्थितिकी और स्थायी विकास

हाल की के वर्षों में 'स्थायी' विकास शब्द ने विस्तृत अंतरराष्ट्रीय मुद्रा की प्राप्ति की है। कारण है : न केवल स्थानीय राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तरों पर बल्कि राष्ट्रों और सरकारों में भी पर्यावरणीय समझ में होने वाली बढ़ोतरी। पर्यावरणीय स्थायित्व सुनिश्चित करते हुए सातवां सहस्राब्दि विकास लक्ष्य भावी पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक पारितंत्र की उत्पादन क्षमता का संरक्षण और स्थायी विकास प्रतिरूपों की प्राप्ति की मांग करता है।

1980 की शुरुआत तक, विश्व के बहुत से देशों में पारिस्थितिकी को विकास नियोजन के अनिवार्य तत्व के रूप में शामिल नहीं किया गया था और इसी वजह से मुख्य मुद्दे के

रूप में इस पर गंभीरता से विचार नहीं किया गया। वर्षों में आर्थिक विस्तार के वैश्विक पर्यावरण के लिए खतरनाक परिणाम रहे हैं। ओजोन परत का कम होना, वायु प्रदूषण वनों और जैव-विविधता का हनन, पौधों और पशुओं की प्रजातियों की विलुप्ति, समुद्री जीवन का हनन, और मृदा एवं जल प्रदूषण खतरनाक दर पर बढ़ रहा है। पर्यावरणीय विविधता के महत्व को महसूस करके और मानव बस्तियों पर इनके द्वारा उत्पन्न समस्याएँ और इनका प्रभाव, जीवन की गुणवत्ता, विकासात्मक समस्याएं और उर्वरता, मृत्युता और रूग्णता में होने वाले परिवर्तनों के मद्देनजर, 1980 के दौरान पारिस्थितिकी की संकल्पना ने अपने महत्व की ओर सभी का ध्यान केंद्रित किया। इससे यह बात सामने आई कि सामान्य तौर पर जीवन की बेहतरी के लिए पारितंत्र को सुरक्षित करना बेहद जरूरी है।

बॉक्स 13.1: पारिस्थितिकी

'पारिस्थितिकी' शब्द का अर्थ भौगोलिक पर्यावरण के साथ बदलता रहता है और इसके परिणामस्वरूप पारिस्थितिकीय परिवर्तन अक्सर साधराण प्रौद्योगिकियों का प्रयोग करने वाले लोगों की भौतिक संस्कृति पर पर्यावरण के सीधे-सीधे प्रभाव के अध्ययन तक ही सीमित रहते हैं... उसी तरह सामाजिक पारिस्थितिकी का संबंध न केवल ऐसे पर्यावरण उत्पन्न प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया से है जहां प्रौद्योगिकी अत्याधुनिक नहीं है बल्कि इसका संबंध ऐसे समूहों के वितरण और संघटन से भी है जो कि प्राकृतिक संसाधन के शोषण, और ऐसे समूहीकरण से उत्पन्न परोक्ष संबंधों और विशिष्ट प्राकृतिक वासों से जुड़ी विश्वव्यवस्था की सामान्य परिकल्पना के लिए जरूरी है।''
(स्रोत : शब्दकोश-समाजशास्त्र 1969 : 62)।

पिछले समय की तुलना में मानव इतिहास का हाल ही का समय, संसाधन सुदुपयोग की अपनी उत्साहवर्धक उच्च दरों को स्पष्ट करता है। औद्योगिक और कृषीय उत्पादों के निरंतर और प्रबल उत्पादन ने संसाधनों के प्रवाह और विश्व भर के समग्र भंडार पर बढ़ती मांगों को उत्पन्न किया है।

प्राकृतिक संसाधनों की वाणिज्यीकरण पर लक्षित विकास अंत:क्षेपों में एक ऐसा बदलाव शामिल है जिसके मद्देनजर संसाधन संबंधी अधिकारों पर ध्यान केंद्रित किया जाता है और उसे लागू किया जाता है। विकास की संसाधन मांग ने आर्थिक रूप से पिछड़े निर्धनों और शक्तिहीनों की उत्तरजीविता को या सीधे तौर पर उनकी बुनियादी आवश्यकताओं से संसाधनों का रुख मोड़ कर या जीवन-सहायक प्राकृतिक संसाधनों का नवीकरण सुनिश्चित करने वाली अनिवार्य पारिस्थितिकीय प्रक्रिया को तबाह करके प्राकृतिक संसाधन आधार को संकुचित कर दिया है। चिरस्थायी विकास के लिए सजीव और निर्जीव संसाधन आधार के आर्थिक कारकों के साथ-साथ इसे सामाजिक, सांस्कृतिक, पारिस्थितिकीय कारकों और इनके दीर्घकालिक और अल्पकालिक लाभ और हानियों को भी ध्यान में रखना चाहिए।

क) स्थायी विकास

ब्रंडलैंड आयोग ने अपनी रिपोर्ट में स्थायी विकास को ऐसे विकास के रूप में परिभाषित किया है "जो भावी पीढ़ियों की अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने की योग्यता से बिना किसी तरह का समझौता किए मौजूदा पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करता है''। इस परिभाषा में दो तरह की संकल्पनाओं का समावेश है--'आवश्यकता' की संकल्पना विशेष रूप से विश्व के निर्धन वर्ग की अनिवार्य आवश्यकताएँ जिन्हें अनिवार्य प्राथमिकता दी जाती चाहिए और मौजूदा और भावी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्यावरण की योग्यता पर प्रोद्योगिकी और सामाजिक संगठन द्वारा लागू सीमाओं का विचार बनाना।

अत: आर्थिक और सामाजिक विकास के लक्ष्यों को अवश्य ही विकसित/ विकासशील,

बाजार-उन्मुख या केंद्रीय स्तर पर नियोजित सभी देशों के स्थायित्व की दृष्टि से ही परिभाषित किया जाना चाहिए। व्याख्या एक-दूसरे से भिन्न होगी लेकिन कुछ विशिष्ट विशेषताएं एक जैसी ही होनी चाहिए और ये स्थायी विकास की बुनियादी संकल्पना पर 'सभी की सर्वसम्मति से बने विचारों के रूप में प्रवाहित होनी चाहिए और विकास की प्राप्ति के लिए विस्तृत सामरिक ढांचे पर आधारित होनी चाहिए'।

विकास में अर्थव्यवस्था और समाज का रूप परिवर्तन होता रहता है। ऐसा विकास पथ जो कि भौतिक दृष्टि से स्थायी है, यहां तक कि स्थिर सामजिक और राजनीतिक व्यवस्था में भी सैद्धांतिक रूप से अनुकरण किया जा सकता है। लेकिन भौतिक स्थायित्व को तब तक सुरक्षित नहीं किया जा सकता जब तक कि विकास नीतियां, संसाधनों तक पहुंच बनाने में होने वाले परिवर्तन और लागतों और लाभों के वितरण में होने वाले परिवर्तनों जैसे विचारणीय बिदुंओं पर अपना ध्यान केंद्रित नहीं करेंगी।

ख) प्राकृतिक संसाधनों पर औपनिवेशिक प्रभुत्व

सदियों से भू, पानी और वनों जैसे प्रभाव प्राकृतिक संसाधनों पर ग्रामीण समुदायों का नियंत्रण कायम था और इनको प्रयोग भी ये लोग मिलजुल कर ही करते थे जिससे ऐसे नवीकृत संसाधनों का स्थायी प्रयोग सुनिश्चित होता था। संसाधन नियंत्रण में पहला मूल-परिवर्तन और गैर-स्थानीय कारकों द्वारा इन प्राकृतिक संसाधनों पर उत्पन्न प्रमुख वादविवादों के आविर्भाव, विश्व के इस भाग पर औपनिवेशिक प्रभुत्व कायम होने से जुड़ा हुआ है। ऐसे प्रभुत्व ने लाभ की प्राप्ति और आमदनी की वृद्धि के लिए सही क्रम में आगे बढ़ते हुए सामान्य लेकिन प्रमुख संसाधनों को वस्तुओं में तब्दील कर दिया। इस प्रवृत्ति से शय मिलने में बड़ी सीमा तक पहली औद्योगिक क्रांति जिसने यूरोपियाई उद्योगों को दक्षिण अफ्रीका के संसाधनों तक पहुंच स्थापित करने की अनुमति दी थी। मुख्य संसाधनों को वस्तुओं में तब्दील करने के दो निहितार्थ हैं— पहला, यह राजनीतिक दृष्टि से निर्बल समूहों को अपने अधिकारों को बनाए रखने से वंचित करता है जिनकी प्राप्ति उन्हें सामान्य संसाधनों तक पहुंच स्थापित करके हुई थी; दूसरा, संसाधन प्रयोग पर सामाजिक अवरोधों को हटा कर यह प्रकृति से उसे संसाधनों को नया रूप देने और उनकी वृद्धि कायम रखने का अधिकार अपने कब्जे में कर लेती है जो कि सामान्य संपदा प्रबंधन का आधार है। अंतरराष्ट्रीय औपनिवेशिक संरचना के विध्वंस होने और क्षेत्र में प्रभुसत्ता वाले देशों की स्थापना से, प्राकृतिक संसाधनों पर ऐसे अंतरराष्ट्रीय वाद-विवाद का कम होने का अनुभव था और इसके बदले व्यापक रूप से राष्ट्रीय हितों के मार्गदर्शन में संसाधन नीतियों ने जगह कायम कर ली। हालांकि संसाधन प्रयोग नीतियां औपनिवेशिक प्रतिरूप के साथ अपनी रफ्तार पर आगे चलती रहीं और हाल ही के वर्षो में तीसरी दुनिया के कुलीन वर्ग की मांगों को पूरा करने और अंतरराष्ट्रीय अपेक्षाओं को पूरा करने में संसाधन प्रयोग में दूसरा महत्वपूर्ण बदलाव लाया गया है जिससे विविध-हितों में एक अन्य प्रचंड द्वंद्व उत्पन्न होने के आसार हैं। इस द्वंद्व का सर्वाधिक गंभीर और चुनौतीपूर्ण लाभ जो नजर आयेगा, वह शायद ऐसा राजनीतिक दृष्टि से दुर्बल और सामाजिक असंगठित समूह है जिसकी संसाधन अपेक्षाएं न्यूनतम हैं और जिसकी उत्तरजीविता मुख्य रूप से बाजार व्यवस्था से परे प्रकृति के उत्पादों पर सीधे तौर पर निर्भर है। संसाधन सदुपयोग से हाल ही में होने वाले परिवर्तनों ने पूरी तरह ऐसे समूहों की उत्तरजीविता आवश्यकताओं पर अपना नियंत्रण कायम कर लिया है। ऐसे परिवर्तन मुख्यतया दक्षिण के कुलीन वर्गो और उत्तर के देशों की अपेक्षाओं की देन हैं।

चिंतन और कार्रवाई 13.1

आपकी राय में उपभोग में बढ़ोतरी किस प्रकार विकास की प्रक्रिया का प्रभावित करती है?

ग) वैश्विक बाजारों का विस्तार

विचारधारा के रूप में विकास, वैश्विक बाजार प्रभुत्व के परोक्ष प्रवेश की अनुमति देता है। इससे अंतरराष्ट्रीय सहायता और विदेश ऋण की आवश्यकता उत्पन्न होती है जो कि ऐसी

विकास परियोजनाओं के लिए पूंजी प्रदान करती है जो संसाधनों को बाजार में चलाता है या उन् पर एकल स्वामित्व कायम करता है। इसी वजह से स्थानीय संसाधन, धीरे-धीरे स्थानीय समुदायों के नियंत्रण से बाहर हो जाते हैं और यहां तक कि राष्ट्रीय सरकारें भी अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं के हाथों की कठपुतली बन जाती हैं। वानिकी परियोजनाएं, बांध परियोजनाएं और मत्स्य पालन परियोजनाओं दूर दराज के गांव के संसाधनों में अंतरराष्ट्रीय निवेश और सहायता को शामिल करते हैं। विश्व बैंक जैसी बहुपक्षीय विकास एजेंसियां पर्यावरणीय दृष्टि से कृषि वानिकी और सिंचाई जैसे संवेदनशील क्षेत्रों के लिए ऋण देती हैं और इन ऋणों के माध्यम से बाजार अर्थव्यवस्था को प्रमुखता प्रदान करता है और प्रकृति की अर्थव्यवस्था और उत्तरजीविता अर्थव्यवस्था को अपरिहार्य रूप देता है। सिंचाई परियोजनाओं में ऋण की शर्त से प्राकृतिक संसाधनों के सदुपयोग के माध्यम और निवेश पर वापसी की दर का निर्धारण होता है जो कि नकदी फसलों की खेतीबाड़ी और पानी की बर्बादी के लिए अत्यावश्यक है यद्यपि इससे पूरी जमीन पानी से भर जाती है या शुष्क मरुभूमि बन जाती है। अंतरराष्ट्रीय वित्त घोषित विकास परियोजनाओं के माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों पर उत्पन्न वादविवाद जनजातीय और कृषीय समुदायों को ऐसे अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के मुकाबले में खड़ा कर देते हैं जहां राज्य की भूमिका, बेदाबल स्थानीय समुदायों के अभिकर्ता के रूप में विकास की विचारधाराओं और वैश्विक योजनाओं का रास्ता अवरोधरहित बनाने की होती है। अत: वैश्विक बाजार अर्थव्यवस्था से नाता जोड़ने का अर्थ प्रकृति की अर्थव्यवस्था और उत्तरजीविता अर्थव्यवस्था के लिए विचारणीय मुद्दे को अनदेखा करना है।

तीसरी दुनिया के देशों के आर्थिक विकास में अंतरराष्ट्रीय वित्त का भारी प्रयोग प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन की कार्यनीतियों में भारी बदलाव लाता है। जरूरी संसाधनों के निर्यात में तेजी में वृद्धि होने से देश ऋण के जाल में फंस गए हैं और साथ ही साथ वहां पारिस्थितिकीय निम्नीकरण भी काफी हुआ है।

बॉक्स 13.2: चैरनोबिल महाविपत्ति

26 अप्रैल 1986 को बेलोरसियन सीमा से 12 किमी. दूर केव क्षेत्र, यूकेन में महाविपत्ति उत्पन्न हुई अर्थात चैरनोबिल नाभिकीय पावर स्टेशन की एक पावर इकाई में घोर संकट पैदा हो गया। अपने बड़े आकार और दीर्घकालिक जटिल परिणामों के कारण परमाणविक ऊर्जा प्रयोग के समग्र विश्व इतिहास में यह सर्वाधीक भीष्ण महाविपति है। बंद रिएक्टर के धमाके के परिणामस्वरूप, रेडियोएक्टिव पदार्थों की भारी मात्रा में वातावरण में घुलमिल गई। दुर्घटना से बेलारस क्षेत्र के 23 फीसदी भाग पर रेडियो - एक्टिव प्रभाव का भारी असर पड़ा जहाँ पर कि 2 मलियिन से भी लोगों की 3778 बस्तियाँ थी। प्रभावित कुल क्षेत्र यूक्रेन का 4.8 प्रतिश्त भाग था और रूस का 0.5 प्रतिशत।

चेरनोबेल दुर्घटना के बाद पारिस्थितिकीय आपदा का क्षेत्र बन गया। स्थिति बद से बदतर बन गई जब रेडियोएक्टिव संदूषण का नया क्षेत्र, पहले से मौजूद उच्च रासायनिक प्रदूषण वाले क्षेत्र से जुड़ गया। कृषीय भूमियों का क्षेत्र रेडियोएक्टिव सीजियम-137 से संदूषित हो गया और ऐसा प्रभावित क्षेत्र 1600 हजार हैक्टर तक फैला हुआ है। बेलोटस में 1685 हजार हैक्टर का वन रेडियोएक्टि तत्वों से संदूषित है। इस महाविपत्ति ने बेटोरस के लाखों रहने वालों के भाग्य पर प्रतिकूल प्रभाव छोड़ा है। ऐसी महाविपत्ति से कृषीय उत्पादन और वानिकी को सामान्य होने में काफी दशकों का समय लगेगा।

स्रोत: www//belonusguide.com

13.3 पर्यावरणीय चिंता के मुद्दे और समकालीन सामाजिक सिद्धांत

मौजूदा पारिस्थितिकीय संकटों के कारणों और परिणामों पर हाल ही में जो चिंता व्यक्त की गई है, आधुनिक सामाजिक सिद्धांत में उसका विशेष महत्व है। मनुष्यों और प्रकृति के बीच का संबंध और प्रकृति पर मानव कार्यों के हानिकर प्रभाव जो कि अभी तक का उपेक्षित क्षेत्र रहा है, मुख्य मुद्दे के रूप में उभरा है। समकालीन सिद्धांत में अन्य महत्वपूर्ण मुद्दा पर्यावरणीय राजनीति/आंदोलनों की वृद्धि है जो उत्पादन के आधुनिक औद्योगिक / पूंजीवाद माध्यम के लिए चुनौती है जो कि पर्यावरणीय रूप से अनिवार्यतया विनाशकारी है।

एंथनी गिड्डन ने अपनी बाद की रचनओं में पर्यावरणीय समस्याओं को विकासशील देशों के औद्योगिक क्षेत्रों आधुनिक औद्योगिक समाजों के लिए उत्तरदायी ठहराया है। संकट का मूल बिंदू चाहे कुछ भी हो, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के तालमेल से चित्रित आधुनिक उद्योग विश्व की प्रकृति में अभी तक का सबसे बड़ा बदलाव लाने के लिए उत्तरदायी है (गिडड्न 1990 : 60)। अलरिच बैक, पूर्व के सभी समाजों से आधुनिक समाज को अलग करता है क्योंकि यह समाज पर्यावरणीय निम्नीकरण के कारण विनाशकारी क्षमताओं पर आधारित है।

पूर्व-औद्योगिक समाजों में, प्राकृतिक आपदाओं से उत्पन्न जोखिम और उनकी गूढ़ प्रकृति को स्वैच्छिक निर्णयन के लिए उत्तरदायी नहीं माना जा सकता था। औद्योगिक समाजों में जोखिम की प्रकृति बदल गई। कार्य-स्थल पर होने वाली दुर्घटनाओं और औद्योगिक जोखिमों या बेरोजगारी से बढ़ते खतरे जो कि आर्थिक चक्रों में होने वाले परिणाम हैं अर्थात् इनके लिए ज्यादा समय तक प्रकृति को दोषी नहीं माना जा सकता। इन समाजों ने बीमा, क्षतिपूर्ति, सुरक्षा आदि के रूप में खतरों और जोखिमों से जूझने के लिए विशिष्ट संस्थाओं और विधियों को भी विकसित किया। जोखिम समाजों की विशेषताओं में पर्यावरण का निरंतर बढ़ता ह्रास और पर्यावरणीय संकटों का समावेश है। मुल रूप से चर्चा में आधुनिकीकरण के जोखिम और परिणाम निहित हैं जिन्हें पौधों, पशुओं और मनुष्यों के जीवन के लिए स्थायी चुनौती के रूप में देखा गया है। 19वीं और 20वीं शताब्दी के पहले 50 वर्षों में फैक्ट्री या व्यावसायिक खतरों के विपरीत, अब ये निश्चित स्थानों या समूहों तक ही सीमित नहीं है बल्कि बजाय इसके, वैश्वीकरण की प्रवृत्ति को दर्शाता है (बैक 1992 : 13)।

पर्यावरणीय संकटों और जोखिमों के विभिन्न किस्म के वास्तविक या संभावित प्रभावों के मद्देनजर इनसे जूझने की पिछली विधियाँ भी ध्वस्त हो गई हैं। लेकिन जब 'चेरनोबिल' (देखें बॉक्स 13.1) जैसे बड़े पैमाने की आपदाएं उत्पन्न होती हैं तो इसके खिलाफ आवाज भी उठाई जाती है जो कि राज्य और अन्य संस्थाओं की वैधता को चुनौती देती है जो कि ऐसी समस्याओं से जूझने में शक्तिहीन नजर आते हैं।

गिड्डन पारिस्थितिक चुनौतियों पर प्रतिक्रिया के रूप में पर्यावरणीय राजनीति के उद्भव के लिए दो व्याखाएं पेश करता है इसलिए आदर्श मूल्यों और नैतिक अपरिहार्यता से बनी राजनीति की शुरुआत हुई। गिड्डन का मानना है कि पारिस्थितिकीय आंदोलन हमें आधुनिकता के ऐसे आयामों का मुकाबला करने के लिए विवश करते हैं जिन्हें अभी तक अनदेखा किया गया है। इसके अलावा ये प्रकृति और मनुष्यों के बीच के सूक्ष्म संबंधों के प्रति हमें संवेदनशील बनाते है जिन्हें कि अन्यथा अनन्वेषितही छोड़ दिया जाता है (गिड्डन 1987 : 49)।

हैबरमैस, पारिस्थितिकी आंदोलनों को प्राण-जगत को बसाने की प्रतिक्रिया के रूप में देखते हैं। चंकि ये प्राण-जगत के अभिव्यक्तिशील क्रम को मूर्त रूप में देखने के अभिव्यक्ति है।

इसके अलावा सरकार के प्रशासनिक तंत्र में होने वाले आर्थिक विकास या तकनीकी सुधार इन तनावों को कम नहीं कर सकते। हैबरमैस के लिए पूंजीवाद, पर्यावरणीय निम्नीकरण का मूल कारण है।

ये सभी सामाजिक सिद्धांतवादी, राज्य शक्ति और नागरिक समाज के लोकतंत्रिकरण की आवश्यकता पर जोर देते हैं। गिड्डन (1990 : 170) का सुझाव है कि न केवल प्रभाव बल्कि बेरोक वैज्ञानिक और प्रैद्योगिकीय विकास के गूढ़ तर्कशस्त्र का भी हमें मुकाबला करना होगा यदि हमें इसके भावी नुकसान को अनदेखा करना है। उसका तर्क है कि चूंकि अधिकांश अनुवर्ती पारिस्थितिकीय मुद्दे वैश्विक हैं इसलिए अत:क्षेपों के स्वरूपों का आधार भी अनिवर्यतया वैश्विक ही होना चाहिए। स्थानीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय लोकतंत्र के नये स्वरूप उभर सकते हैं और किसी भी रजनीति का अनिवार्य घटक गठित करते हैं जो कि आधुनिकता की चुनौतियों को लांघने का प्रयास करते हैं। हैबरमैस आधुनिक राज्य सत्ता की सीमाओं के महत्व को ध्यान में रखते हुए सार्वजनिक क्षेत्र के निर्माण और प्रतिरक्षा के लिए तर्क देता है जहां एक उचित लोकतांत्रिक वार्ता उत्पन्न हो सकती है। बैक, जोखिम समिति के खतरों पर मुख्य राजनीतिक प्रतिक्रिया के रूप में पारिस्थितिकीय लोकतंत्र का तर्क देता है। शोध कार्यक्रम विकास योजनाएं और नव प्रौद्योगिकियों के आगमन पर खुल कर चर्चा होनी चाहिए और इसके साथ-साथ इन पर कानूनी और संस्थागत नियंत्रण को और अधिक प्रभावी बनाना चाहिए। उपर्युक्त सभी बुद्धिजीवियों ने पर्यावरण स्थायित्व को हमेशा अनिवार्य पूर्व-शर्त के रूप में उदारवादी लोकतंत्र की सहभागी विशेषता की बजाय पहले से मौजूद प्रबल प्रतिनिधित्व की सीमाओं की ओर इशारा किया है।

पर्यावरणीय मुद्दों के विश्लेषण में समाशास्त्रीय/सामाजिक विज्ञान परिप्रेक्ष्य अभी भी उभर रहा है। सामाजिक सच्चाई की मांगों पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए समाजशास्त्री हमारे समय की बहुत सी पर्यावरणीय समस्याओं के बहुत से आयामों की खोजबीन करने की मात्र शुरुआत कर रहे हैं।

पारिस्थितिकीय/पर्यावरणीय परिप्रेक्ष्य, समाजशास्त्रीय दिलचस्पी के मुद्दों के कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्रों के अछूते आयाम पर ध्यान केंद्रित करता है। आधुनिकीकरण/विकास कार्यक्रमों की सशक्त समीक्षा के रूप में यह परिप्रेक्ष्य, परियोजना की अस्थिरता को उजागर करता है। उत्पादन का औद्योगिक पूँजीवाद तरीका और उपभोग, इसके अस्तित्व के लिए अनिवार्य संसाधन आधार को नष्ट कर देता है और यहाँ तक कि खुद मानव जीवन के लिए भी खतरा है।

पर्यावरणीय राजनीति और आंदोलनों की वृद्धि ने समाजशास्त्रीय जाँच के नये क्षेत्रों को खोल दिया है जो चारों ओर की राजनीति के परंपरागत द्विभाजन से परे है जो वर्ग विभाजन को ओर जहाँ तक कि राष्ट्रीय सीमाओं को भी समाप्त करता है और किसी जानी मानी पहल के प्रयोग से नागरिक (सिविल) समाज क दायरे में सक्रियतावाद के लिए जगह बनाता है। बुनियादी तौर पर यह मनुष्यों और उनके प्राकृतिक पर्यावरण के बीच के संबंध की पुन: परिभाषा और प्रकृति पर मानव कार्रवाई के प्रभावों पर पुन: विचार करने की मांग करता है।

13.4 पारिस्थितिकीय और पर्यावरण पर विकास के परिणाम

वायु, जल, भूमि और ऊर्जा समेत जीवन के लिए अनविार्य पद्धतियों में मानव पारिस्थितिकी के महत्वपूर्ण प्रभाव को भलीभांति स्पष्ट किया गया है। मानव आबादी के बढ़ने के साथ-साथ खाद्य उत्पादन में और आवासीय संकट बढ़ जाता है। जिससे पर्यावरणीय प्रदूषण उत्पन्न होता है जो नकारात्मक रूप से हमारे आसपड़ोस को बदल देता है। ऐसी परिस्थितियों में जीवित रहने के लिए विस्तार या जगह की बदली करना जरूरी है और मानव के अस्तित्व और

सुख सुविधा को बनाए रखने के लिए प्राकृतिक जंगलों को नष्ट करने की जरूरत है। ऐसी मानव गतिविधियाँ यथासमय में हर तरह का प्रदूषण उत्पन्न करते हैं जो कि आज चिंता का विश्वव्यापी मुद्दा है। ऐसी मानव गतिविधियों पर चर्चा इस प्रकार है :

क) **जल प्रदूषण**

जल प्रदूषण के मुख्य स्रोत हैं :

i) औद्योगिक (अपशिष्ट) या जहरीले गौण उत्पाद।

ii) मलजल अपशिष्ट: इसमें अपघटित जैविक पदार्थ और नदी, झरने, झीलों आदि में सीधे बहां दिए जाने वाले रोगोत्पादक एजेंट शामिल हैं।

iii) कृषीय प्रदूषक: इनमें शामिल हैं, उर्वरक रेग नियंत्रक रासायनिक (पेस्टनाशी, कीटनाशी, शाकनाशी और कवकनाशी) जैसे कृषीय पोषकतत्वों का अत्यधिक इस्तेमाल।

इन प्रदूषकों का असर मानवों और पौधों और पशुओं पर एक जैसा है। हालांकि उपर्युक्त प्रदूषकों में से औद्योगिक अपशिष्ट अधिक प्रदूषण उत्पन्न करते हैं।

ख) **वायु प्रदूषण और शोर**

स्रोत हैं:

i) **औद्योगिक विनिर्माण प्रक्रम:** स्टील, रासायनिक पौधे, तेलशोधक कारखाने, उर्वरक फैक्टरियाँ आदि।

ii) **दहन:** कोयले, तेल और जंगल आग का औद्योगिक और घरेलू दहन, धुएं, मिट्टी, कार्बन डाइऑक्साइड, सल्फ़र डाइऑक्साइड आदि के माध्यम से।

iii) **ऑटोमोबाइल:** इनसे निकलने वाला कार्बन मोनो ऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड, निलंबित कणिकीय पदार्थ।

iv) **विविध:** पेस्ट नियंत्रण के लिए फसलों पर छिड़काव, नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम आदि।

v) **विकिरण प्रदूषण:** चेटनोबिल या भोपाल में घटित गैस त्रासदी, इसके उदाहरण हैं।

इस संदर्भ में भी उद्योगों, विनिर्माण और विकिरण से निकलने वाली गैसों से भी बड़ा प्रदूषण उत्पन्न होता है।

ग) **मृदा प्रदूषण**

i) **नाभिकीय युक्तियों के विस्फोट से गिरने वाली ठोस टुकड़े।**

ii) **कृषीय गतिविधियाँ** — अजैविक उर्वरक और रासायनिक आधारित विविध पेस्टनाशियों का जरूरत से ज्यादा इस्तेमाल।

घ) **वनों की तबादी**

बड़े पैमाने पर वनोन्मूलन से मृदा अपरदन, बाढ़ आना, नदियों में मिट्टी जम जाना और कृषीय क्षेत्रों का संकुचन और जमीनों पर शुष्कता पैदा होना है। स्थानीय ग्रामीण जो ईंधन के रूप में लकड़ी का प्रयोग करते हैं कि तुलना में वन कन्ट्रैक्टरों के माध्यम से वनोन्मूलन ज्यादा देखने को मिलता है।

इस तरह का प्रत्येक प्रदूषण प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मानव, स्वास्थ्य, पशु एवं वनस्पति जगत को पर्यावरण के माध्यम से प्रभावित करता है।

चिंतन एवं कार्रवाई 13.2

विश्व की आधे से अधिक की आबादी पहले से ही शहरों में बसी हुई है और शहरीकरण की गति तेजी से बढ़ रही है। विश्व के 8 मिलियन की आबादी से अधिक के अधिकांश महाशहर विकासशील जगत में हैं। हम शहरीकरण को किस प्रकार और अधिक स्थायी बनाते हैं? क्या हम वायु और जल प्रदूषण और कृषिभूमियों के हनन और प्रकृति से अलग-थलग होने जैसी समस्याओं को अनदेखा कर सकते हैं? आज के समय में मानव सम्मुख के समक्ष आने वाले प्रमुख पारिस्थितिकीय चुनौतियाँ क्या हैं?

13.5 पारिस्थितिकी आंदोलन और उत्तरजीविता

समकालीन में विश्व के सभी भागों में ऐसे पारिस्थितिकी आंदोलनों के उद्‌भव जैसी विशेषताएं पायी जाती हैं जो सामाजिक समानता और पारिस्थितिकीय स्थायित्व सुनिश्चित करने के लिए प्राकृतिक संसाधन सदुपयोग के प्रतिरूप को पुन: निर्मित करने और इनका विस्तार करने का प्रयास कर रहे थे। प्राकृतिक संसाधन और उत्तरजीविता के लिए जन के अधिकार जैसे मुद्दों से उत्पन्न वादविवादों से पारिस्थितिकी आंदोलनों का उद्‌भव हो रहा है और इनका विस्तार भारतीय उपमहाद्वीप जैसे क्षेत्रों में हो रहा है जहाँ अधिकांश प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग पहले से बड़ी संख्या में लोगों की उत्तरजीविता संबंधी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जा रहा है। ऐसी दशाओं के अंतर्गत संसाधन और ऊर्जा संघन उत्पादन प्रौद्योगिकियों की पेशकश से अल्पसंख्यकों की आर्थिक वृद्धि होती है जबकि इसके साथ-साथ इससे बड़ी संख्या में लोगों की उत्तरजीविता के लिए मूलभूत सामग्री नष्ट हो जाती है। इस तरह पारिस्थितिकी आंदोलन ने विकास की प्रबल संकल्पनाओं और सूचकों की वैधता पर सवालिया निशान लगा दिया है। तृतीय विश्व पारिस्थितिकीय आंदोलन जो राज्य नियंत्रित बाजार विकास से उत्पन्न बर्बादी पर रोक लगाते हैं, वे बाजार के संकीर्ण दायरे में परिभाषित राजनीति और अर्थनीतियें की संकल्पनाओं को चुनौती दे रहे हैं। वे इस बात को स्पष्ट करते हैं कि यह लोकतंत्र का विचार है जो कि बाजार लोकतंत्र से अधिक विस्तृत और गूढ़ है। यह मानव समाज के सभी खंडों और अमानवीय प्रकृति के जीवन को ध्यान में रखकर सभी प्राणियों के लिए लोकतंत्र की पारिस्थितिकीय संकल्पना है और इस संकल्पना में उन सभी की विशाल संख्या भी शामिल है जो बाजारी दायरे में न तो किसी किस्म का उत्पादन या उपभोग करते हैं या कर सकते हैं और जिन्हें बाजार के संदर्भ में अनावश्यक माना जाता है। तृतीय विश्व पारिस्थितिकी आंदोलन ऐसे तरीकों को उजागर करते हैं जिनके माध्यम से पारिस्थितिकी और समता और स्थायित्व और न्याय के मुद्दों को गहराई से एक दूसरे में जोड़ा जाता है।

स्वतंत्र भारत में पारिस्थितिकी आंदोलनों की प्रबलता और पहुंच लगातार बढ़ते गए हैं क्योंकि विकास की प्रक्रिया में सहायक प्राकृतिक संसाधनों को लूटने वालों की संख्या और शक्ति भी पहले से अधिक सुदृढ़ हो गई थी। इस प्रक्रिया को ऊर्जा और संसाधन संघन औद्योगिक गतिविधि के विस्तृत प्रसार और विशाल बांध, वन शोषण, खदान और ऊर्जा संघन कृषि जैसी प्रमुख विकास परियोजनाओं के रूप में देखा जाता है। भारत में व्याप्त विविध पारिस्थितिकी आंदोलनों में 'चिपको आंदोलन' सर्वाधिक सुप्रसिद्ध है। इस आंदोलन में पेड़ों को गिराने के कार्य को रोकने के लिए पेड़ों को चारों ओर से घेरकर उनसे चिपकना है। इस आंदोलन की शुरुआत उत्तर प्रदेश राज्य में पहाड़ी लोगों से हुई जो बाहरी ठेकेदारों के शोषण से वन संसाधनों को बचाना चाहते थे। बाद में इसने पारिस्थितिकीय आंदोलन का रूप ले लिया जो कि भारत में पहाड़ी क्षेत्रों में जलसंकटों के प्राकृतिक स्थायित्व के रखरखव पर लक्षित था। समान प्रचंड प्रतिक्रिया झारखंड क्षेत्र के प्रमुख वन संसाधनों को बचाने के लिए भी वहां के लोगों ने दिखाई। इसी तरह बिहार-उड़ीसा सीमा क्षेत्र के साथ-साथ मध्य प्रदेश के बस्तर क्षेत्र में भी ऐसी ही प्रचंड प्रतिक्रिया वहां के लोगों ने व्यक्त की, जहाँ मिश्रित, प्राकृतिक संसाधनों को वाणिज्यिक किस्म के पौधों के रोपण में बदलने के प्रयास किए गए थे और

जो कि वहाँ के जनजातिय लोगों के लिए पूर्णतया 'हानिप्रद' था। चिपको आंदोलन से प्रेरित होकर हिमालय में 'अपिको आंदोलन' सक्रिय रूप से चलाया गया जिसने गैर कानूनी रूप से वनों की अत्यधिक कटाई के खिलाफ आवाज उठाई और जो बहुउद्देश्य किस्म के पेड़ों को ऐसी प्राकृतिक संसाधनों के बदले लगाने के विरुद्ध में चलाया गया था। राजस्थान के अरावली पर्वतों में वृक्ष रोपण का विशाल कार्यक्रम शुरू किया गया ताकि ऐसे लोगों को रोजगार दिया जा सकें। जो अभी तक पेड़ों की कटाई में जुटे थे।

खनिज संसाधनों का शोषण, विशेष रूप से हिमालय, पश्चिमी घाटों और मध्य भारत के संवेदनशील जलसंभरों में खुली खदानों में होने वाली गतिविधियों से भी भारी पर्यावरणीय क्षति पहुंची है जिसके परिणामस्वरूप अंधाधुंध खदानी गतिविधियों के विरुद्ध आवाज उठाने के लिए इन क्षेत्रों में भी पर्यावरणीय आंदोलनों की शुरुआत हुई। इनमें से सर्वाधिक सफल आंदोलन, इन घाटी में खुली खदानों में चूना पत्थर का काम करने के विरूद्ध आवाज उठाने वाले आंदोलन थे।

बड़ी नदी घाटी परियोजनाएँ भारत में काफी तेज गति से जिनका आगमन हो रहा है, ऐसी विकास परियोजनाओं का अन्य समूह हैं जिनके विरुद्ध जन ने पारिस्थितिकी आंदोलनों की शुरूआत की है। बड़ी नदी घाटी परियोजनाओं के लिए पूर्वापेक्षित कारक के रूप में बड़े पैमाने पर वन और कृषीय भूमि का जल में डूब जाने से घने जंगल और भोजन देने वाली श्रेष्ठ भूमि का भारी मात्रा में हनन होता है और भारत में विशेष रूप से जनजातीय लोगों के लिए ये आमतौर पर उत्तरजीविता का भौतिक आधार रहे हैं। यू पी हिमालयाई क्षेत्र में तेहरी उच्च बांध के विरुद्ध चलाए जाने वाले पारिस्थितिकीय आंदोलन, बांध स्थल से ऊपर या नीचे रहने वाले लोगों के जीवन के संभावित खतरे का खुलासा करता है जिसका कारण है जल को अवरुद्ध करने से निरुयन्दन और तेज भूकंपीय झटकों से बड़े पैमाने पर जीवन का अस्त-व्यस्त होना।

13.6 पारिस्थितिकीय चिंता के मुद्दों के रूप में विकास परियोजनाएँ

इस अनुभाग में हम कुछ ऐसी परियोजनाओं की प्रस्तुति करेंगे जिन पर भारत में हाल ही के वर्षों में पारिस्थितिकी और पर्यावरण के लिए चुनौती के रूप में विस्तृत चर्चा की गई है।

क) तेहरी जलविद्युत परियोजना

विवादास्पद तेहरी बांध, विकास की मांगों के मद्देनजर हिमालयाई भौगोलिक व्यवस्था और पारिस्थितिकी के संदर्भ में मानव निर्मित मनमानी, तबाही का जीवंत उदाहरण है। निचले हिमालय में इसकी जल और विद्युत क्षमता को निखारने के लिए उच्च बांध स्थापित करने का विचार 1949 में बनाया गया और पहले इसके लिए समुद्री सतह से 1550 मीटर की ऊंचाई पर 1000 वर्ष पहले से पवित्र शहर तेहरी से डेढ़ किलोमीटर नीचे की ओर प्रवाहित होने वाली नदी भगीरथी को इस उद्देश्य के लिए चुना गया। तेहरी बांध के विकास और अवस्थिति को लेकर बहुत सी शंकाएं उभरी।

तेहरी बांध, मध्य हिमालयाई भूकंपीय अंतराल में स्थित हैं। जहाँ भारतीय पट्टिका प्रति वर्ष 2 सेमी की रफ्तार पर एशियाई मुख्य भूमि से टकरा रही है। बांध निर्माण से उत्पन्न भौगोलिक उथल-पथल से भूकंप आने की संभावना और प्रबलता और तीव्र हो गई है। भगीरथी घाटी मार्ग की दीवारों के रूप में नजर आने वाली चट्टानों में पानी रिसने का खतरा है और इनमें इकट्ठे होने वाले जल से पर्वतीय ढलानों पर भारी भार पड़ेगा। इसके साथ-साथ नदी तल के पत्थर का भी निरंतर क्षय हो रहा है जिससे बांध की नींव के कमजोर होने का डर है जो कि पहले से ही गलत इरादे पर बनी है। इसके अलावा, तेहरी बांध के बनने से जल के प्राकृतिक प्रवाह में अवसादों (Sediments) के शामिल होने से नदी तल का स्तर बढ़ जायेगा जिससे आसपास बनी घनी बस्तियों को भारी खतरा पैदा हो सकता है। इससे बहुत

से गांव बाढ़ की चपेट में आ जायेंगे और ऐसे गांव के मूलवासी जो पीढ़ियों से यहां रह रहे हैं, वे विस्थापित हो जायेंगे।

इस क्षेत्र की सर्वाधिक उत्कृष्ट भूमि को छीन लिया गया है और जिन लोगों ने इस भूमि को उत्कृष्ट/उपजाऊ बनाया था, उन्हें इसे वापिस करने के लिए मजबूर किया गया और इसके बदले उन्हें बंजर भूमि के टुकड़े सौंप दिए गए। पुनर्वास योजना ने ग्राम की समग्र छवि को ध्यान में नहीं रखा और अलग-अलग परिवारों के रूप में इनकी तरह ध्यान केंद्रित किया जिससे तोल-मोल करने की इनकी सामूहिक शक्ति और सामुदायिक संस्कृति घूमिल हो गई। गढ़वाल हिमालय के लोग इस परियोजना के खिलाफ हैं और उनक विरोध ने आंदोलन का रूप ले लिया है। परियोजना की ताजी समीक्षा और बांध निर्माण की अधिक गूढ़ अनुवीक्षा का कार्य चल रहा है।

ख) नर्मदा नदी घाटी परियोजना

नर्मदा नदी घाटी परियोजना, देश की सबसे बड़ी परियोजना है और जिससे 30 बड़े बांधों के निर्माण की उम्मीद है और जिनमें से 10 नर्मदा नदी पर और 20 इसकी सहायक नदियों पर बनेंगे। इसके साथ-साथ 135 मध्यम और 3000 छेटे बांध बनेंगे। इनमें से दो महाबांध हैं: सरदार सरोवर और नर्मदा सागर। इस विशाल नदी घाटी में लगभग 21 मिलियन लोग रहते हैं जो कि 98,796 वर्ग किलोमीटर में बंटे हुए हैं। यहाँ तक लगभग 80 फीसदी की आबादी जिनमें जनजातीय संख्या भी काफी है, गांव में बसे हैं और कृषि और वनों पर निर्भर है।

नर्मदा सागर और सरदार सरोवर बांधों को आगे-पीछे करके निर्मित किया जाना था। लेकिन नर्मदा सागर से अनुमान है कि 90,000 वर्ग किलोमीटर का इलाका इससे पानी में डूब जायेगा और इसलिए इसे बनाने के प्रारंभिक विचार से ही यह वादविवादों में उलझ कर रह गया है। जबकि सरदार सरोवर बांध को बनाने का मुद्दा गुजरात सरकार ने गर्मजोशी से उठाया है। परियोजना से प्रभावित लोगों की संख्या बेशुमार है और निंरतर बढ़ रही है। परियोजना के लिए सैकड़ों ग्रामों को खाली कराना होगा जिससे ग्रामीण और जनजातीय लोग विस्थापित और संपत्तिहीन हो जायेंगे।

आजीविका अर्जन के उनके पारंपरिक स्रोत नष्ट हो जायेंगे और पुन:स्थापना का अर्थ सही मायने में उनके लिए कभी भी पहले जैसा नहीं होगा। निमर से किसान जो बागवानी का काम करते हैं जब उन्हें ऐसी उपजाऊ भूमि से बाहर कर दिया जायेगा तो वे अपने फूल कहाँ उगाएंगे? इस बात पर सभी की सहमति है कि इन बांधों के बनने से गंभीर पारिस्थितिकीय परिणाम उत्पन्न होंगे। भारी मात्रा में पानी के एक जगह अवरुद्ध होने से और मृदा के वर्धित खारेपन से स्थिति बद से बदतर हो जायेगी। मेधा पाटेकर और ऐसे बहुत से आंदोलनकारियों ने पर्यावरण पर ऐसे नकारात्मक प्रभावों की तरफ ध्यान आकृष्ट किया है। हड़ताल और अनिश्चितकाल तक भूख हड़ताल जैसे तरीकों से आंदोलनकारियों ने अपना आक्रोश प्रकट किया है। बहुत सी ऐसी विषमताओं के कारण सरदार सरोवर बांध के निर्माण का काम ठप पड़ गया है जिन्हें सरकार की परियोजना रिपोर्ट में पाया गया है।

ग) भोपाल गैस त्रासदी

भोपाल गैस आपदा जैसी आपदा भारतीय इतिहास में एक अलग पहचान बनाए हुए है। इससे बहुराष्ट्रों द्वारा मुनाफा कमाने के लिए विकासशील देशों के अंधाधुंध शोषण का पता चलता है।

पेस्टनाशी बनाने के लिए सुस्थापित, यूनियन कारबाइड संयंत्र का विस्तार बहुत से पर्यावरणीय खतरों के बावजूद भी किया गया। संयंत्र सुरक्षा पद्धति सही मायने में कारगार नहीं थी जिससे प्राणलेवा रिसाव उत्पन्न हो गया और खतरनाक रासायनिक वातावरण में घुलमिल गए। भोपाल शहर में 40 किलोमीटर वर्ग मीटर के क्षेत्र ऐसी गैस का घना कोहरा छा गया जिसके जहरीले

तत्व लोगों पर छिटक रहे थे। इससे वहाँ के गरीब वर्गक पर सर्वाधिक गंभीर प्रभाव पड़ा। ऐसे सैकड़ों लोग मर गए जबकि बहुत से लोगों की सांसों में जहरीले तत्वों के घुल जाने से आज भी वे जीर्ण रोगों से ग्रस्त हैं। भोपाल नरसंहार का अर्थ मुनाफे की खोज में बड़े उद्योगों और बहुराष्ट्र कंपनियों द्वारा विकसित घातक पेस्टनाशियों और रासायनिक की शृंखला से ही नहीं जुड़ा हुआ बल्कि यह ऐसे तृतीय विश्व के देशों की गाथा है जहाँ ऐसी कंपनियाँ अपने खतरनाक उत्पादों की धम्म से पटक देते हैं और घातक रासायनिकों से प्रयोग भी करते हैं। छोटे-बड़े शहरों में विशेष रूप से ऐसी तंग बस्तियों के लोग ऐसी आपदाओं का निशाना सबसे पहले बनते हैं। पेस्टनाशी, कृषि रासायनिक और पैट्रोरासायनिक, बैटरी निर्माण जैसे, कामों का लेन-देन करने वाले अंतर्राष्ट्रीय डीलर जो कि सुरक्षित मानकों की परवाह किए बिना और लोगों का अंधाधुंध शोषण करने के कारण पर्यावरण के लिए बड़ी चुनौती हैं।

घ) चिल्का झींगी उत्पादन

चिल्का झील उड़ीसा में खारे पानी की सबसे बड़ी झील है। यह एक सुरक्षित पक्षी विहार है और जिसमें हज़ारों किसानों और मूल मछुआरों को रोज़ी-रोटी मिलती है। यहां असंख्या किस्म की मछलियां और समुद्री जीवन का वातावरण है। इस अनूठे पारितंत्र में पानी के तल पर पनपने वाले पौइनों की भरमार है जो कि झींगी मछली के लिए विशेष रूप से उपयोगी हैं। झींगा मछली पालन को विकसित करने में इसका प्राकृतिक शक्ति इसे भारी व्यवसाय का रूप देता है। चिल्का के पश्चजल में समेकित झींगी उत्पादन परियोजना (आई एस एफ पी) का विचार कुछ बड़े व्यावसायिकों का विचार है। परियोजना के शुरू होने पर चिल्का के भाग के साथ कृत्रिम झील बनाने के लिए 13 किमी का बाँध बनाया जायेगा। इसे बाद में छोटे पोखरों में बाँट दिया जायेगा जिनमें जरूरत के मुताबिक समुद्री पानी या ताजा पानी भर दिया जायेगा।

जैसा कि परियोजना में प्रस्तावित है 30-40 दिनों में 250-350 ग्राम झींगी के उत्पादन के लिए प्रोटीन समृद्ध चारा, रासायनिक उर्वरक और पेस्टनाशियों को पानी में डालना होगा। जहरीले अपशिष्टों को चिल्का को समुद्र से जोड़ने वाली संकरी खाड़ी में धम्म करके फेंक दिया जायेगा।

आई एस एफ पी बाँध निर्माण से चिल्का का प्राकृतिक उतार-चढ़ाव अपना लय खो देगा जिससे मछलियों के आने-जाने का मार्ग भी प्रभावित होगा। रासायनिकों और पेस्टनाशियों के प्रयोग से इसका लहलहाता तल प्रभावित होगा और पंपों की आवाज से पक्षी डर कर इस तरफ देखेंगे भी नहीं। मवेशी, शुष्क मौसम में लहलहाते इस प्रायद्वीप पर नयी घाय को चरने के योग्य भी नहीं होंगे। चारों तरफ पानी और खारापन नजर आएगा जिससे पारिस्थितिकीय संतुलन बिगड़ जाएगा।

चिंतन और प्रतिबिंब 13.3

विकास की दुविधा की चर्चा कीजिए। किस किस्म का विकास न्यायसंगत और चिरस्थायी होगा?

13.7 पर्यावरणीय चिंता के मुद्दों का अंतर्राष्ट्रीयकरण

पर्यावरणीय मुद्दों पर बढ़ती अंतरराष्ट्रीय चिंता के मद्देनजर लिंटन काल्डवेल (1990) ने नोट किया है कि किसी भी प्रभुत्व संपन्न राष्ट्र के मूल सिद्धांतों को अंतरराष्ट्रीय पर्यावरण सहयोग की दृष्टि से संशोधित किया जा रहा है। ''लिंटन की राय में राष्ट्रों को सामान्य अनिवार्यता के मुद्दों के मद्देनजर अन्य राष्ट्रों को सहयोग दे कर अपनी सांस्कृतिक पहचान और अखंडता को समाप्त करने की जरूरत नहीं है। अमल में, अंतरराष्ट्रीय नीति को राष्ट्रों की सांस्कृतिक और पारिस्थितिकीय भिन्नता की बहाली और इन्हें संरक्षित करने के प्रति निदेशित किया

गया है (वही)''। प्रश्न अंतरराष्ट्रीय पर्यावरणीय सहयोग और राष्ट्रीय पहचान और प्रभुत्व के बीच सिर्फ अनुबंधन बनाना ही नहीं है। स्थायी विकास के महत्वपूर्ण मुद्दों के मद्देनजर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पारिस्थितिकीय मुद्दों के लिए द्वंद्व और वादविवाद की बढ़ती प्रवृति देखी गई है।

विविध अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में स्थायी विकास पर हाल ही में किए जाने वाले विचार विमर्शों को उत्तर-दक्षिण बँटवारे और सोपान क्रम के प्रश्नों पर ध्यान केंद्रित करने के लिए विवश किया गया। इस संदर्भ में बहुत से मतभेद उत्पन्न हैं जिसका कारण वैश्विक पर्यावरणीय निम्नीकरण से लेकर पारिस्थितिकीय संकटों को नियंत्रित करने के तंत्रों के लिए उत्पन्न कारणों से संबंधित विविध मुद्दे हैं।

जहां कुछ तृतीय विश्व देशों के अल्पविकास को ही पर्यावरणीय क्षति का मुख्य कारण मानते हैं वहीं इसी देश के कुछ समर्थकों का तर्क है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पारिस्थितिकीय संकट के रास्ते खोलने में औद्योगिक तरक्की के साथ-साथ विकास की मूल प्रक्रिया सहायक रही है, अंतरराष्ट्रीय स्तर के पर्यावरणीय समझौतों में तृतीय विश्व वक्ता माँग करते हैं कि उत्तर के औद्योगिक देशों को दक्षिण के पर्यावरणीय दृष्टि से प्रदूषण उत्पन्न करने वाले उद्योगों को बदलने के प्रयासों में कमी लानी चाहिए। ओजोन परत के कम होने, पादपगृह प्रभाव आदि जैसे अंतरराष्ट्रीय स्तर के पर्यावरणीय संकटों को दूर करने की जिम्मेवारी अभी भी उत्तर और दक्षिण में वादविवाद का मुद्दा बना हुआ है।

अंतरराष्ट्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण पारिस्थितिकीय परिप्रेक्ष्य विशिष्ट समस्याओं से जूझने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर के न केवल और अधिक नये और विस्तृत क्षेत्रों को सृजित करने की प्रेरणा देता है बल्कि ऐसी बदलावकारी राजनीति की माँग भी करता है जो वैश्विक रूप से असमान सत्ता संबंधों पर भी ध्यान केंद्रित करता है। अलग-अलग दशाओं से राष्ट्र राज्य व्यवस्था को मिलने वाली चुनौतियाँ पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से नये परिप्रेक्ष्यों का प्रदान करती हैं। पर्यावरणीय आंदोलनकारियों और विचारकों ने परंपरागत रूप से तर्क दिया है कि चूंकि राज्य के पास असीम शक्ति है और संसाधन संग्रहण का यह एक साधन है बजाए इसके स्थानीय स्वशासन और पारिस्थितिकीय दृष्टि से चिरस्थायी संसाधन संग्रहण का साधन बनाया जाना चाहिए। उनका मानना है कि स्थानीय और राष्ट्रीय स्तर के जन और उनके पर्यावरण पर वैश्वीकरण बलों का प्रचंड हमला समकालीन पारिस्थितिकीय परिप्रेक्ष्य से विकास के लिए नयी चुनौतियों का पैदा करेगा।

बदलते वैश्विक संदर्भ में स्थानीय समुदायों के लिए ऐसे बहुराष्ट्रीय कार्पोरेशन और एजेंसियों द्वारा उनकी प्राकृतिक धरोहर की लूटपाट को रोकना बेहद मुश्किल होता जा रहा है। पारिस्थितिकी आंदोलन अपनी छितरित प्रकृति और राष्ट्र-राज्य की बदलती छवि के कारण अपने निजी दोष को महसूस करते समय राष्ट्र-राज्य और अंतरराष्ट्रीय मामलों के वृहद-राजनीति और आंदोलनों की लघु राजनीति के बीच के अनुबंधन पर भी पुन:ध्यान केंद्रित करने के लिए विवश हैं। अनिवार्य वैकल्पिक मार्ग के रूप में सिविल समाज और राज्य को नये लोकतांत्रिक तरीकों से पुन: बनाने पर विचार किया जा रहा है।

पारिस्थितिकी और स्थायी विकास पर अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य, ऐसी बदलावकारी राजनीति की बात सोचता है जो कि स्थानीय भागों से सीधे वैश्विक राज्यों तक संसाधनों का संग्रहण की मौजूदा प्रक्रियाओं और सत्ता के सोपनाक्रम के लिए कड़ी चुनौती है। राजनीति का ऐसा बदलाव मनुष्यों और प्रकृति का शोषण करने वाले ऐसे बलों को चुनौती देने में संघर्षों के विकास के माध्यम से प्रकृति और संसाधनों के चिरस्थायित्व को देखता है। ऐसा ही परिप्रेक्ष्य सार्थक और सहज लोकतांत्रिक स्थानीय-वैश्विक अनुबंधनों को अंदरूनी उपागम के साथ देखता है।

13.8 प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन के लिए सहभागितापरक उपागम

संरक्षणवादियों, विकासवादियों, महिला आंदोलनकारियों जनजातिय और अन्य उत्पीड़ित समूहों की पर्यावरण-विकास मुद्दों पर अलग-अलग धारणाएँ हैं और इन मुद्दों पर ऐसे ही वादविवाद से पता चलता है कि प्रत्येक वर्ग की ऐसे मुद्दों पर अपनी एक अलग स्थिति है या संरक्षण, निर्धनों की विशेष रूप से महिलाओं जीवन-निर्वाह संबंधी आवश्यकताओं और आर्थिक वृद्धि मॉडलों और महत्वपूर्ण संसाधनों के स्थायित्व और पारितंत्र के लिए मौजूदा चुनौतियों और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में शामिल लागतों और लाभों के वितरण जैसे मुद्दों पर प्रत्येक वर्ग का जोर देने का अपना एक अलग तरीका है। पर्यावरण विकास संबंधों पर ध्यान केंद्रित करने से प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन और नियंत्रण के मुद्दों को नया रूप दिया गया है क्योंकि इससे वैश्विक अर्थव्यवस्था की माँगों का पता चलता है जो लोगों के पारंपरिक अधिकारों और उनकी आजीविका पर उनके दावे से जुड़ा उनका हक मार कर निर्धारित की गई हैं। राजनीतिक और आर्थिक संग्राम जैसे-जैसे प्रबल रूप धारण करते हैं, आजीविका हित और व्यावसायिक हित भी, न खत्म होने वाले वादविवाद में उलझ जाते हैं और इनमें समझौता कराना आसान नहीं होगा।

पिछले कई वर्षों से औपचारिक और अनौपचारिक अर्थात दोनों व्यवस्थाओं में प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन के लिए बहुत से दृष्टिकोणों को रेखांकित किया गया है ताकि सक्षमता के आधार पर सहभगितापरक प्रक्रियाओं को सहयोग दिया जाये और जिसमें उपयुक्त संस्थागत व्यवस्थाओं के माध्यम से राज्य और समुदाय के बीच भागीदारी कायम की जाये और इस कार्य में स्थानीय लोगों को भी शामिल किया जाये। प्राकृतिक संसाधनों के विकेंद्रीकृत प्रबंधन की कार्यसूची के मद्देनजर हम विभिन्न संस्थागत व्यवस्थाओं की पहचान कर सकते हैं जैसे अपने बलबूते से आरंभ प्रयोगकर्त्ता समूह, सरकारी पहलों (संयुक्त जन प्रबंधन या जलविभाजक प्रबंधन) के माध्यम से सुस्थापित औपचारिक स्तर के समुदाय और स्थानीय स्व-शासन (पंचायती राज) संस्थाएँ ऐसे स्थानीय संस्थागत बंदोबस्त राज्य-समुदायिक गतिशीलता को बदलने में विकल्पों, प्राथमिकताओं और सौदाकारी पद्धतियों की रूपरेखा विकसित करते हैं।

स्थानीय संसाधनों के समुदाय प्रबंधन या विकेंद्रीकृत कार्यनीति का महत्व बढ़ गया है क्योंकि इससे आजीविका को सुरक्षा प्रदान करने की उम्मीद की जाती है जिससे संसाधनों का और अधिक स्थायी प्रबंधन कायम होगा। प्राकृतिक संसाधनों के सामुदायिक प्रबंधन की तरफदारी में अक्सर जो तर्क दिया जाता है वह ऐसी 'घरेलू (देसी) महिला ज्ञान पद्धतियों से संबंधित है जो कि किसी विशिष्ट समुदाय या संदर्भ में उन्हीं मूल प्रथाओं में व्याप्त है। शिव का तर्क है कि ''तीसरी दुनिया की महिला जनजातियों और कृषक चिंतन और कार्रवाई की पारिस्थतिकीय श्रेणियों में बौद्धिक शिक्षा का भंडार हैं ''(शिवा 1988)।

पर्यावरणीय मुद्दों पर महिलाओं की प्रतिक्रियाओं पर उनकी आजीविका पद्धति श्रम विभाजन, उत्पादनकारी संसाधनों पर असमान पहुँच और सूचना और ज्ञान के कारण अवरोध उत्पन्न हो जाता है। स्थानीय गैरसरकारी संगठनों ने स्थानीय संसाधन आधार के प्रबंधन और सामाजिक न्याय निर्धनता और देश के मूलवासियों के अधिकारों के मुद्दों से स्त्री/पुरुष समानता के मुद्दों को जोड़ने के लिए विकल्पों का निर्माण करने का प्रयास किया है। सामाजिक न्याय और स्थानीय जन के अधिकार के लिए वादविवाद का मूलाधार है कि संसाधनों के निरंतर प्रयोग में स्थानीय समुदायों का विशेष महत्व है और विशिष्ट सामाजिक और पारिस्थितिकीय दशाओं पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने और इनके अनुकूल बनने में इनकी स्थिति बेहतर है। स्थानीय पारिस्थितिकीय व्यवहारों प्रक्रियाओं से भी ये भली-भांति अवगत होते हैं और ये पहुँच और प्रबंधन के पारंपरिक तरीकों के माध्यम से संसाधनों की देखरेख भी कर सकते हैं।

पिछले दो दशकों के दौरान प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन और जैव-विविधता संरक्षण दाता एजेंसियों में और अन्य देशों में प्रमुख प्राथमिकताओं के रूप में उभरे हैं। राष्ट्रों को वैश्विक संसाधन प्रबंधन पहलों के अनुरूप लाने के लिए जन-उन्मुख और समुदाय-आधारित प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन ऐसी रणनीति का भाग बन गए हैं (न्यूमैन, 2005)।

> **चिंतन और कार्रवाई 13.4**
>
> आने वाले समय में स्थायित्व कायम करने के लिए जीवनशैली और व्यवहार में भारी बदलाव करना अनिवार्य है। चर्चा कीजिए।

13.9 सारांश

पर्यावरणीय मुद्दों पर चिंता व्यक्त करने की सीमाएं तेजी से विलुप्त हो रही हैं। पारिस्थितिकीय परिप्रेक्ष्यों और आंदोलनों में स्थानीय-वैश्विक अनुबंधन और अधिक स्पष्ट रूप से नजर आ रहा है। जहाँ विश्व भर में व्याप्त लोगों और समुदायों के विविध भाग आंदोलनों के माध्यम से पर्यावरण और उत्तरजीविता के मुद्दों को तेजी से उठा रहे हैं वहीं राष्ट्र-राज्य, अंतरराष्ट्रीय स्तर के पर्यावरणीय क्षेत्रों को सृजित करने इंटरनेशनल प्रोटोकोल विकसित करने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर के विचार-विमर्शों और सम्मेलनों में जुटे हुए हैं। हमारे समय की पारिस्थितिकी संबंधी राजनीति पर ध्यान केंद्रित करने का सार्थक प्रयास, स्थानीय-वैश्विक मानकों के दायरे में और इसके बीच उभरती द्वंद्वात्मक और सहमति-जन्य गतिशीलता पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है और इसे समझना है। आज के समय में पारिस्थितिकीय परिप्रेक्ष्यों को और अधिक सटीक दृष्टि से व्यक्त करने की जरूरत है।

हमारी यह इकाई पारिस्थितिकी, पर्यावरण और विकास के बीच के अंत:संबंध को स्पष्ट करती है। यह बताती है कि किस तरह पारिस्थितिकी और पर्यावरण, सामाजिक सिद्धांत पर ध्यान केंद्रित करती है। हम ये मानते हैं कि 'पर्यावरणीय मुद्दों' पर हमारी अधिकांश प्रतिक्रियाएं निरर्थक ही रहेगी जब तक कि विश्व में हर स्तर पर इस बात को समझ नहीं लिया जाता कि हमारी प्रजातियाँ, हमारी प्रकृति का अभिन्न भाग है। लेकिन इसके साथ-साथ हमें अपनी सीमाओं का भी अवश्य पता होना चाहिए। इस बात को समझकर या इसके अभाव में भी भावी समाज और राज्य व्यवस्था के लिए इसके अनेक निहितार्थ हैं। इसके कुछ ऐसे क्षेत्रों के लिए विविध अर्थ हैं जितने कि विचारधारा, विकास, प्रौद्योगिकीय विकल्प और उपभोक्ता स्वतंत्रता जैसी विषयवस्तु और दिशा अपना अलग अर्थ है। इस इकाई का मुख्य भाग मौजूदा समय में अपनाए जाने वाले विकास संबंधी व्यवहारों द्वारा उत्पन्न पर्यावरणीय संकट के असीम भागों पर ध्यान केंद्रित करना है। इसके अलावा हमने संसक्त, तर्कसंगत और पारिस्थितिकीय परिप्रेक्ष्य विकसित करने में घोर चुनौतियाँ उत्पन्न करने वाले इस संकट के समाधान की तत्काल आवश्यकता को भी समझा। अंतत: इस इकाई में संसाधनों के प्रबंधन के लिए वैकल्पिक प्रतिमान की छानबीन भी की गई है।

13.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

मुंशी, आई, 2000 ''एनवायरमेंट इन सोशोलाजिक्ल थ्योरी'' सोशोलाजिक्ल बुलेटिन, खंड 49, संख्या 2, 258-62.

शिवा वी, 1991, इकौलोजी एंड द पॉलिटिक्स ऑफ सरवाइवल : यूएन यूनिवर्सिटी प्रेस एंड सेज पब्लिकेशन : नई दिल्ली।

यू एन डी पी 2003; ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस : नई दिल्ली।